चौंसठ ऋद्धि विधान

चौंसठ ऋद्धि सम्पन्न श्री चौबीस तीर्थंकरों के गणधरों की पूजा

(गीता छन्द)

चौबीस जिन के गणधरों की, आज हम अर्चा करें।
सुरभित सुमन ले साथ में, उनकी परम अर्चा करें॥
गणधर गुरु सब आईए, हममें भरें तप ज्योत्सना।
उन सम विरागी हम बने, इस हेतु यह आराधना॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(दोहा)

नीर भरे घट से करें, गणधर पद प्रक्षाल।
जन्मादिक त्रय रोग हर, पायें सुख त्रय काल॥
चौबीसों जिनराज के, गणधर का गुणगान।
सर्व रोग संकट हरे, करे अखिल उत्थान॥1॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल सुरभित गंध से, अर्चें श्री गुरु पाद।
नशें सकल संताप वा, राग-द्वेष अवसाद॥ चौबीसों... ॥2॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः गंधं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत उज्ज्वल धवल ले, उत्तम पुँज चढ़ाय।
गणधर कृपा रहे जहाँ, अक्षय सुख मिल जाय॥ चौबीसों... ॥3॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कमलादिक बहु सुमन लें, जपें गुरु का नाम।
आत्म ब्रह्म में लीन हो, नशें अधम खल काम॥
चौबीसों जिनराज के, गणधर का गुणगान।
सर्व रोग संकट हरे, करे अखिल उत्थान॥4॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पुड़ी इमरती आदि ले, पूजें गण अधिनाथ।
क्षुधा विजय क्षण में करें, बन जायें जगनाथ॥ चौबीसों... ॥5॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप आरती से करें, गणनायक गुणगान।
मोह तिमिर अज्ञान हर, पायें केवलज्ञान॥ चौबीसों... ॥6॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप अनल में खेयकर, पूजें गुरु पद पद्म।
आठों कर्म विनाश कर, वरें सुखद शिव सद्म॥ चौबीसों... ॥7॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केलादिक बहु फल लिए, आये गणधर द्वार।
उनका शुभ आशीष ही, नाशे कर्म विकार॥ चौबीसों... ॥8॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल से फल तक द्रव्य ले, मनहर अर्घ सजाय।
विघ्न विनायक को भजें, पद अनर्घ मिल जाय॥ चौबीसों... ॥9॥

ॐ ह्रीं ह्र्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)

बुध्यादिक् चौंसठ ऋद्धीधर, मुनि तीर्थद गणधर होते हैं।
कुछ और श्रमण सब ऋद्धी में, कुछ-कुछ ऋद्धीधर होते हैं॥
हम उनके तप गुण मन में रख, पूर्णार्घ पवित्र चढ़ाते हैं।
त्रय रत्न श्रमण सम धारण कर, शिवपथ पर कदम बढ़ाते हैं॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुःषष्टि ऋद्धिधारक परम ऋषिभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. घी सहित, 2. खाया, 3. घी सहित, 4. अक्षय रसोई।

लघु गणधर वलय विधान

दोहा- तीर्थंकर की देशना, झेलें गणी महान्।
पुष्पांजलि उन पर करें, करते भव्य विधान॥

अथ मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

(नरेन्द्र छंद)

आदिनाथ के धर्म सूत्र को, जिनने उर में धारा।
'वृषभसेन' आदिक चौरासि, गणि को नमन हमारा॥
चौदह सौ बावन गणधर की, भक्ति आपदा नाशे।
ऋद्धि-सिद्धि वा सौख्य दिलाये, केवलज्ञान विकासे॥1॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री वृषभनाथस्य 'वृषभसेनादि' चतुरशीति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अजितनाथ के अजित त्याग को, 'सिंहसेन' गणि धारें।
उन युत नब्बे गणधर मुनिवर, क्रम से मोक्ष सिधारें॥ चौदह..॥2॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री अजितनाथस्य 'सिंहसेनादि' नवति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संभव जिन के सह भव नाशे, 'चारुदत्त' गण स्वामी।
इक सौ पाँच गणेश्वर जिनवर, बने परम शिवगामी॥ चौदह..॥3॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री संभवनाथस्य 'चारुदत्तादि' पंचोत्तरशतम् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनंदन का वंदन करते, इक सौ तीन गणेशा।
गुरु 'व्रजादि' गणधर जिन को, नमते सर्व सुरेशा॥ चौदह..॥4॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री अभिनंदननाथस्य 'व्रजादि' त्र्याधिक शतं गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमतिनाथ ने इक सौ सोलह, गणधर रत्न बनाये।
'तौतक' आदिक गण के नायक, तीर्थंकर गुण गायें॥ चौदह..॥5॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री सुमतिनाथस्य 'चमरादि' षोडशाधिक शतं गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वज्रचमर' आदिक इक सौ दस, पद्मप्रभु के चेले।
उनके गणधर बनकर वे सब, शिवरमणी संग खेलें॥
चौदह सौ बावन गणधर की, भक्ति आपदा नाशे।
ऋद्धि-सिद्धि वा सौख्य दिलाये, केवलज्ञान विकासे॥6॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री पद्मनाथस्य 'वज्रचमरादि' दशाधिक शतं गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सुपार्श्व के समवशरण में, 'बलदत्तादि' गणेशा।
एक शतक कम पाँच कहाये, श्रमण संघ के ईशा॥ चौदह..॥7॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री सुपार्श्वनाथस्य 'बलदत्तादि' पंचनवति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चंद्रनाथ हैं पूर्ण चंद्र सम, गणधर बने सितारे।
'दंतादि' त्रय नब्बे गणधर, उनके चरण पखारें॥ चौदह..॥8॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री चंद्रप्रभस्य 'दंतादि' त्रिनवति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पदंत की वाणी झेलें, अट्ठयासी गुरु न्यारे।
'संघातिक' गण के अधिनायक, अपना संघ सम्हारें॥ चौदह..॥9॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री पुष्पदंतस्य 'संघातिकादि' अष्टाशीतिः गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल जिन के 'अनगारादिक', इक्यासी गण इन्द्रा।
जिनके चरण कमल को पूजें, नर सुर इन्द्र मुनीन्द्रा॥ चौदह..॥10॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री शीतलनाथस्य 'अनगारादि' एकाशीतिः गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सौधर्मादि' सतत्तर गणधर, श्री श्रेयांस जिनवर के।
चरम शरीरी गुरु मुद्रा को, भव्य जीव अवलोके॥ चौदह..॥11॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री श्रेयांसनाथस्य 'सुधर्मादि' सप्तसप्तति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु 'वरांश' ने वासुपूज्य से, रत्नत्रय वर पाया।
उन संग छ्यासठ गणधारी ने, जीवन अमर बनाया॥
चौदह सौ बावन गणधर की, भक्ति आपदा नाशे।
ऋद्धि-सिद्धि वा सौख्य दिलाये, केवलज्ञान विकासे॥12॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री वासुपूज्यस्य 'वरांशादि' षट्षष्टिः गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विमलनाथ की जय-जय बोलें, श्री 'जय' गणधर स्वामी।
पचपन गुरु भी प्रभु को ध्याकर, बने सुखद शिवगामी॥ चौदह..॥13॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री विमलनाथस्य 'जयादि' पंचपंचाशत गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंत जिन ने भव अनंत की, अन्त्य विधि सिखलाई।
गुरु 'अरिष्टादिक' पचास ने, वही विधी अपनाई॥ चौदह..॥14॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री अनन्तनाथस्य 'अरिष्टादि' पंचाशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मनाथ की धर्म ध्वजा को, धर 'अरिष्टसेनादि'।
तैंतालिस गणनायक सम्मुख, हारे परमत वादी॥ चौदह..॥15॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री धर्मनाथस्य 'अरिष्टसेनादि' त्रिचत्वारिंशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतिनाथ के धर्मचक्र को, 'चक्रायुध' गुरु धारें।
छत्तिस गणपतियों ने अपने, कर्म चक्र परिहारे॥ चौदह..॥16॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री शांतिनाथस्य 'चक्रायुधादि' षट्त्रिंशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंथुनाथ की अमृतवाणी, 'अमृतसेन' धरे हैं।
उन युत पैंतिस गणधर स्वामी, अमृत पान करें हैं॥ चौदह..॥17॥

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री कुंथुनाथस्य 'अमृतसेनादि' पंचत्रिंशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरहनाथ की वृष श्रेणी पर, 'श्री सुषेण' ले जायें।
तीस गणीन्द्रों को नित ध्याकर, हम भी वह सुख पायें॥
चौदह सौ बावन गणधर की, भक्ति आपदा नाशे।
ऋद्धि-सिद्धि वा सौख्य दिलाये, केवलज्ञान विकासे॥18॥

ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री अरहनाथस्य 'कुंथ्वादि' त्रिंशत् गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मल्लिनाथ के शिष्य 'विशाखा', कर्म मल्ल को मारें।
अट्ठाइस गुरुओं के सम्मुख, कर्म शत्रु खुद हारे॥ चौदह..॥19॥

ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री मल्लिनाथस्य 'विशाखाचार्यादि' अष्टाविंशति गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिसुव्रत से दिव्य महाव्रत, 'धारिण' गुरु ने धारा।
ऋद्धि प्रदाता अठदस गुरु ने, उसको ही स्वीकारा॥ चौदह..॥20॥

ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री मुनिसुव्रतनाथस्य 'धारिणादि' अष्टादश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नमि जिनवर की धर्म सुधा को, 'सोमादि' गुरु पीते।
उसको पीकर सतरह गुरु भी, यम वैरी को जीते॥ चौदह..॥21॥

ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री नमिनाथस्य 'सोमादि' सप्तदश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेमीनाथ की धर्म धुरा को, धारें 'वरदत्तादी'।
सिद्धी विधाता ग्यारह गुरु भी, हरते आधि उपाधी॥ चौदह..॥22॥

ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री नेमीनाथस्य 'वरदत्तादि' एकादश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'स्वयंभवादि' पार्श्वनाथ संग, स्वयं सिद्ध पद पायें।
उन युत दस गुरु विघ्न विनायक, प्रभु को शीश नवायें॥ चौदह..॥23॥

ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री पार्श्वनाथस्य 'स्वयंभवादि' दश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'इन्द्रभूति' जिन इन्द्र युक्ति से, वीर शरण में आये।
ग्यारह गणधर परम पुण्य से, वीर वचन अपनायें॥
चौदह सौ बावन गणधर की, भक्ति आपदा नाशे।
ऋद्धि-सिद्धि वा सौख्य दिलाये, केवलज्ञान विकासे॥24॥

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री महावीरनाथस्य 'इन्द्रभूत्यादि' एकादश गणधरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य (नरेन्द्र छंद)

आदिनाथ से महावीर तक तीर्थंकर सुखकारी।
उनके चौदह सौ बावन हैं, गणधर ज्ञान प्रचारी॥
वृषभसेन से इन्द्रभूति तक, सब गणधर को ध्यायें।
मनहर अर्घ चढ़ाकर हम सब, रत्नत्रय गुण पायें॥

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः श्री चतुर्विंशति तीर्थंकराणां श्री वृषभसेनादि एक सहस्र चतुर्शतक द्विर्पचाशत गणधरेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- क्षीरोदक ले कलश में, गुरु पद धारा देय।
पुष्पाञ्जलि अर्पित करें, रत्नत्रय गुण लेय॥

शांतये शांतिधारा....दिव्य पुष्पांजलि क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र- ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा झौं झौं नमः स्वाहा। (9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा- ऋद्धि-सिद्धि दातार हैं, श्री गणधर भगवान।
उनकी जय गुण मालिका, करें स्वपर उत्थान॥

(शंभु छंद)

जय-जय गणधर गुणमणि आकर, तुम तीर्थंकर पथधारी हो।
चौंसठ ऋद्धी के धारक तुम, द्वादश अंगों के धारी हो॥

निज-निज तीर्थंकर जिन सम्मुख, तुमने मुनि पद को पाया है।
तप त्याग विशुद्ध भावना से, सब ऋद्धि-सिद्धि को पाया है॥1॥

पूर्वार्जित निज अति सुकृत से, तुम मुनि गण के आचार्य बने।
जिन रवि किरणों के धारक हो, गुरु सर्वोत्तम श्रमणार्य बने॥
गणधर-गणीन्द्र-गण के नायक, मुनि गणपति-विघ्न विनायक हो।
अघ रोग-शोक संकटहर्त्ता, भव्यों के भाग्य विधायक हो॥2॥

तीर्थंकर जिन की धर्मसभा, द्वादश कोठों में भाजित है।
उसमें मुनिगण के कोठे में, गणनायक नित्य विराजित हैं॥
तीर्थंकर दिव्य वचन पावन, ओंकार रूप में आते हैं।
दिनकर की किरणों के जैसे, गणधर में आन समाते हैं॥3॥

जिन वचन महोदधि गूढ़ सरस, शत इन्द्र समझ नहीं पाते हैं।
द्वादश अंगों व पूर्वों में, गणि उनको सुगम बनाते हैं॥
गणधर गुंथित जिन आगम ही, बहु प्रज्ञादीप जलाता है।
निज-निज भवांत कर भवि प्राणी, इससे रत्नत्रय पाता है॥4॥

फिर कर्म नशा गणधर स्वामी, अरिहंत सिद्ध पद पाते हैं।
तब त्रिभुवन वासी उत्सव से, अतिशायी भक्ति रचाते हैं॥
हे जिन यती ! 'गुप्तिनंदी' भी, तव गुण में ध्यान लगाता है।
शिव राज आप सम पाने को, उत्तम जयमाला गाता है॥5॥

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झौं झौं नमः सर्व तीर्थंकर गणधर परमेष्ठिभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(गीता छन्द)

जिनभक्त निर्मल भाव से 'गणधर वलय' पूजन करें।
त्रैलोक्य सुख पा जाये वो सुर-नर उन्हें वन्दन करें॥
फिर धर क्षमादिक् धर्म को शिवराज वे पा जायेंगे।
त्रय 'गुप्ति' का व्रत पूर्णकर भवदुःख कभी ना पायेंगे॥

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्।